IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

मानुष प्रेम का कवि : जायसी

डॉ. संगीता रानी
भारती कालेज, दिल्ली विश्वविद्यालय

भक्तिकालीन कविता अपने कलेवर में प्रथमत: आध्यात्मिक होने के बावजूद मानव जीवनानुभवों की पूंजी से निर्मित कविता है। ये अनुभव जनसामान्य के जीवन से जुड़े हैं और उनके जीवन की समस्याओं, संघर्षों और सपनों को बेहतर बनाने के संकल्प से भी संबद्ध हैं। भक्ति काव्य मानव हितों और अधिकारों से जुड़ा है इसीलिए इसे भक्ति आंदोलन भी कहा जाता है। आम जन के जीवन को प्रभावित करने वाले विविध पक्षों सामाजिक चिंतन, राजनीति, धर्म, दर्शन इत्यादि के प्रति भक्त कवि जागरूक और सचेत हैं। विभिन्न साधना और विचार पथों से जुड़े होने के बावजूद सभी भक्त कवि बंधुत्व, समता, त्याग, प्रेम जैसे उच्चतर मानव मूल्यों की स्थापना के पक्षधर हैं। इस दृष्टि से सूफी कवि मलिक मुहम्मद जायसी और उनकी कालजयी रचना पद्मावत का उल्लेखनीय स्थान है।

जायसी द्वारा पद्मावत की रचना सोलहवीं सदी में की गई।[1] गार्सा द तासी ने सबसे पहले जायसी का उल्लेख करते हुए यह लिखा कि उन्होंने मुसलमान होते हुए भी हिंदुई में काव्य रचना की।[2] जार्ज ग्रियर्सन की पुस्तक 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' में भी जायसी और उनके पद्मावत की चर्चा की गई है। ग्रियर्सन ने पद्मावत को रुपक काव्य मानते हुए उसकी भाषा की प्रशंसा की है।[3] मिश्रबंधुओं ने भी अपने इतिहास ग्रंथ 'मिश्रबंधु विनोद' में जायसी की चर्चा करते हुए पद्मावत में मसनबी शैली की बात की।[4] इन सभी ग्रंथों में जायसी और उनके पद्मावत का उल्लेख अवश्य हुआ परंतु उसका गहन विवेचन होना बाकी था जो कि बीसवीं सदी में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल द्वारा किया गया।[5] शुक्ल जी ने एक भक्त, एक रचनाकार के रूप में जायसी पर चर्चा की और उन्होंने पद्मावत का गहराई से विवेचन भी किया। शुक्ल जी के इस विशिष्ट कार्य की सराहना आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने भी की। उन्होंने शुक्ल जी के जायसी के पद्मावत संबंधी विशद विवेचन की प्रशंसा करते हुए लिखा– "पद्मावत की प्रस्तावना में आपने जैसी काव्य–मर्मज्ञता दिखाई है वैसी हिन्दी तो क्या, अन्य आधुनिक भारतीय भाषाओं में कम ही मिलेगी। यह प्रस्तावना अपने आपमें अत्यधिक महत्वपूर्ण साहित्यिक कृति है।"[6]

शुक्ल जी ने जायसी के चिंतन और रचनात्मक योगदान को रेखांकित करते हुए लिखा कि "कबीर ने केवल भिन्न प्रतीत होती हुई परोक्ष सत्ता की एकता का आभास दिया था। प्रत्यक्ष जीवन की एकता का दृश्य सबके सामने रखने की आवश्यकता बनी हुई थी। वह जायसी द्वारा पूरी हुई।"[7] शुक्ल जी ने भक्त कवियों के सामाजिक योगदान की गहराई से पड़ताल की। वे इस तथ्य को खासतौर पर चिन्हित करते हैं कि भक्त कवियों ने हिन्दू और इस्लाम दोनों धर्मों के लोगों के बीच आपसी विश्वास को बहाल करने का काम किया, जो उस समय की प्रमुख आवश्यकता थी। भक्त कवियों का सादा जीवन और सरल व्यक्तित्व धार्मिक, सामाजिक मतवादों से परे था, इसलिए उनके संदेशों और गतिविधियों का सामान्य जन पर असर पड़ना स्वाभाविक था। कबीर और अन्य संतों ने दोनों धर्मों के कट्टरपन पर जोरदार प्रहार किया और मानव मात्र की एकता का संदेश दिया। दोनों धर्मों के ठेकेदारों ने इसे चाहे जिस रूप में लिया हो, जनसामान्य के मानस पर इसका गहरा प्रभाव पड़ा। लोगों में आपस में मेल–जोल बढ़ा और वे अपने जीवन, समाज और धर्मों से जुड़ी कहानियों को सुनने सुनाने को तैयार होने लगे थे। ऐसे समय में जायसी ने उन्हें और करीब लाने और जोड़ने का महत्वपूर्ण काम अपनी रचना पद्मावत के माध्यम से किया।

भक्ति आंदोलन न सिर्फ अखिल भारतीय आंदोलन है अपितु देश और काल की दृष्टि से ऐसा व्यापक सांस्कृतिक आंदोलन संसार में दूसरा नहीं है।[8] भक्ति आंदोलन का मुख्य लक्ष्य है मनुष्यत्व की रक्षा का। मानुष सत्य के ऊपर कुछ भी नहीं– न कुल, न जाति, न धर्म, न संप्रदाय, न स्त्री पुरुष का भेद, न किसी शास्त्र का भय और न लोक का भ्रम।[9] भक्ति कविता का यह भाव उसे न सिर्फ कुल, जाति, धर्म, संप्रदाय की संकीर्णताओं से ऊपर उठाता है अपितु सबको एक दूसरे से जोड़ता है और हर तरह की सत्ता के भय से मुक्ति भी दिलाता है। इससे एक व्यापक मानवीय भूमि का निर्माण होता है जिससे विविध पंथों, साधनाओं और विचारों के लोगों के बीच सहमति की एक भावभूमि तैयार होती है। जायसी की कविता भी इसी भूमि से सीधी जुड़ती और उसे मजबूती देती है।

जायसी के रचनाकार व्यक्तित्व की ताकत का सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि उनकी कृति पद्मावत अतीत की रचना होते हुए भी जिस मानुष प्रेम और सौहार्द्र की बात करती है वह आज के समाज व्यवस्था के लिए भी आवश्यक है। यह कविता हिन्दी भाषा के स्वभाव की भी है और हिन्दी भाषी जनसमुदाय के भी। इस कविता की ताकत यह है कि सांप्रदायिकता, कट्टरता और अन्य सामंती रूढ़ियों

के विरोध में ही इसका उपयोग किया जा सकता है। वर्ण, जाति, धर्म, लिंग इत्यादि के आधार पर बंटे मध्यकालीन समाज में यह व्यापक एकता और प्रेम को प्रस्तावित करती है।

भक्तिकालीन कविता अपने समय की वास्तविकता का चित्रण करने के साथ ही उनकी गहरी आलोचना भी प्रस्तुत करती है। वह सामंती व्यवस्था की अनीति, जड़ता और निर्ममता को तोड़ने का प्रयास भी करती है। सामंती सत्ता के आतंक और अनीति के अनेक रूप हैं तो भक्ति काव्य पूरी निडरता के साथ इसका मुक़ाबला करता है। भक्ति आंदोलन को कुछ विद्वानों ने इस्लामी आक्रमण की प्रतिक्रिया और निराशा का परिणाम माना है तो कुछ इसे भारतीय चिंता धारा का स्वाभाविक विकास मानते हुए इस्लाम के प्रभाव को कमतर मानते हैं। इस बात पर बहस विमर्श की गुंजाइश हो सकती है कि इस्लाम का किस तरह का प्रभाव भक्ति आन्दोलन पर पड़ा लेकिन यह तो ऐतिहासिक सच्चाई है कि इस्लाम भारत में आ चुका था और वह भी विजेताओं के धर्म के रूप में। वह अब शासकों का धर्म था। मीरा को छोडकर लगभग सभी प्रमुख भक्त कवियों के यहाँ यह प्रभाव दिखाई देता है। सूर और तुलसी के काव्य में भी उस सांस्कृतिक प्रक्रिया का संकेत है जो उस वक्त निर्मित हो रही थी। कबीर दोनों धर्मों के कट्टरता की बात करते हैं और उनपर प्रहार करते हैं। जायसी की कविता में तो यह प्रभाव सबसे अधिक गहरा है। जायसी इस वास्तविकता की न सिर्फ पहचान करते हैं अपितु धार्मिक कट्टरता और सामंती नृशंसता के विरुद्ध व्यापक मानवीय भावों का समर्थन करते हुए मानव प्रेम को सबसे बड़ा मूल्य भी बताते हैं।

जायसी को 'मानुष प्रेम' का अमर गायक भी कहा जा सकता है। मध्यकालीन समाज के बिखराव के बीच जायसी सबके बीच प्रेम और सौहार्द्र की प्रतिष्ठा का भरसक प्रयास करते हैं। पद्मावत में यह भाव आद्यंत अभिव्यंजित होता रहता है। जायसी ने अन्य सूफी कवियों की तरह ही लोक मानस में प्रसिद्ध प्रेम कथा को आधार बनाया और उसमें अपने समय की जनसंस्कृति का समावेश कर पद्मावत की सर्जना की। वे लिखते हैं – आदि अंत जसि कथ्था अहै। लिखि भाषा चौपाई कहै ॥[10] अर्थात जैसी कथा सुनी थी वैसी ही जनभाषा में चौपाई छंद में लिख दी।

प्रेम भक्ति आंदोलन का सबसे बड़ा मूल्य है। यह प्रेम जहां सामंती सोच और आचरण को चुनौती देता है वहीं भक्ति की विविध धाराओं को आपस में जोड़ता है। संत, सूफी, वैष्णव सभी इसकी सत्ता और महता को स्वीकार करते हैं। प्रेम की इस धारा के सबसे अधिक प्रवीण कवि जायसी माने जाते हैं। उनके अनुसार संसार में सब कुछ नाशवान और क्षणभंगुर है। सबसे अधिक महत्वपूर्ण और सार्थक प्रेम है। यह मानव जीवन का चरम मूल्य है, जिसके बिना यह संसार राख से अधिक कुछ भी नहीं।

मानुष प्रेम भएउ बैकुंठी

रीतिकालीन कवि बोधा ने लिखा – यह प्रेम को पंथ कराल महा, तरवारि की धारि पै धावनों है

जायसी तो पद्मावत की पूरी कथा को कहने का उद्देश्य भी इसी प्रेम की पीर को पाठकों तक पहुँचने को मानते हैं। इस प्रेम की पीर को पहुँचना ही सबसे बड़ा काम्य है। यहाँ यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि प्रेम एक सार्थक और सनातन विषय है, फिर भी उसे आधार बनाकर जायसी को काव्य रचने और भक्ति के दर्शन के रूप में प्रस्तावित करने की व्यावहारिक आवश्यकता क्यों पड़ी। सबसे बड़ी बात यह कि इस प्रेम की प्रतिष्ठा इतनी कठिन क्यों कि बोधा को इसे तलवार की धार के समान कहना पड़ा और जायसी को इस प्रेम में इतनी कठिनाइयों को चिन्हित करना पड़ा। इस प्रश्न का उत्तर मध्यकालीन समाज की संरचना और संस्कृति में निहित है। प्रेम के नाम पर जहां षडयंत्रों और विलास का प्रभुत्व हो, जहां प्रेम सत्ता के अहं को तुष्ट करने का साधन हो, जहां प्रेम में समाज को जोड़ने वालों से अधिक तोड़ने वाली ताकतों और सोच का प्रभुत्व हो, वहाँ प्रेम की प्रतिष्ठा करना सबसे अधिक कठिन कार्य है। जायसी समेत सभी भक्त कवि इस कठिनाई से जूझते हैं और प्रेम की प्रतिष्ठा के लिए संघर्ष करते हैं, उसे सबसे बड़े मूल्य के रूप में प्रतिष्ठित करते हैं। यह प्रेम भारतीय संस्कृति का मूल्य है, मानवता का सबसे बड़ा मूल्य है।

भक्ति कविता में निहित प्रेम किसी बंधन के रूप में नहीं आता, यह स्वतन्त्रता और मुक्ति के साधन के रूप में सामने आता है। यह मानव प्रेम एक तरफ इहलोक में लोभ, दिखावा, आडंबर, तृष्णा, घृणा, षड्यंत्र, हिंसा और प्रतिशोध से रहित बेहतर सद्भावपूर्ण समाज के निर्माण में सहायक है दूसरी ओर यही प्रेम विकसित होकर और सभी तरह के विकारों से मुक्त होकर भगवद प्रेम तक पहुंचता है। जायसी की पद्मावत इसी प्रेम का उत्कृष्ट उदाहरण है। इस प्रेम में सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक भेद नहीं बल्कि वह सभी भेदों को खत्म करने वाला है, सबको जोड़ने वाला है। इसकी कीमत है अहं का त्याग, तृष्णा का खात्मा, स्वयं को अर्पित कर इसे पाया जा सकता है, अर्थात सभी तरह के भेदों का अंत कर ही सच्चे प्रेम की प्राप्ति होती है। दिल्ली के तख्त का सुल्तान अलाउद्दीन भी पद्मावती को प्राप्त करना चाहता है और अपनी पूरी सामर्थ्य के साथ जी–जान से प्रयास करता है। मित्रता, संधि, छल–कपट, युद्ध– अर्थात साम, दाम, दंड, भेद वह सब जो वो कर सकता था, लेकिन उसका मकसद अधूरा रह जाता है। अपनी ताकत से चित्तौर के अभेद्य समझे जाने वाले किले को वह चूर–चूर कर डालता है, उसे अपनी सल्तनत का हिस्सा बना लेता है। अपनी ताकत और सूझ–बूझ के बल पर कुछ भी हासिल करने का दंभ पालने वाला अलाउद्दीन विफल साबित होता है। चित्तौर की भूमि और ईंट पत्थर का स्वामी बनने के बाद उसकी विफलता उसके सामने आ खड़ी होती है। विजेता अलाउद्दीन की स्थिति पर जायसी की टिप्पणी है–

आइ साहि जब सुना अखारा। होई गा रात देवस जो बारा॥[11]

जिस अनहोनी को रोकने की कोशिश दिल्ली के तख्त के सुल्तान ने लगातार की, वह हो गई। जायसी यहाँ सिद्ध करते हैं कि अलाउद्दीन का आधार ही गलत था। वह प्रेम और सौंदर्य को छल और बल से पाना चाहता था, इसलिए विफल हुआ, स्वयं उसे खोने का कारण बन बैठा। चित्तौर का किला और खजाना भले ही उसका हो गया हो, लेकिन इसके बावजूद वह पराजित हुआ। जीत के बावजूद पराजय का यह दंश, असफलता की पीड़ा वह बिन्दु है, जो कथा का केंद्रीय भाव है। अलाउद्दीन के इस अफसोस में ही जायसी का मूल संदेश निहित है। अगर यह जीत है तो इस जीत से बड़ी हार क्या हो सकती है? संदेश स्पष्ट है कि धार्मिक कट्टरता भयंकर होती है, यदि वह सत्ता से जुड़ी हो तो और भी विनाशकारी होती है।[12] अलाउद्दीन जीत कर भी हार जाता है, दिल्ली का बादशाह अपनी सारी ताकत, वैभव और विजय के पश्चात भी अपनी इच्छा को पूरा नहीं कर पाता। राख़ को उठाकर उसे अपने अहंकार और बादशाहत की व्यर्थता का बोध होता है, यह अहसास होता है कि यह पृथ्वी झूठी है, अर्थात तृष्णा का कोई अंत नहीं। उसकी इच्छा सिर्फ मृगतृष्णा बन कर रह जाती है। यहां जायसी का संदेश मुखरित होता है। सौंदर्य और प्रेम के बिना यह संसार नि:सार है, राख के समान है–

छार उठाइ लीन्हि एक मूठी। दीन्हि उड़ाइ पिरिथिमी झूठी॥

जायसी के लिए प्रेम ही मानव जीवन का सबसे बड़ा मूल्य है। वह अत्यंत गूढ और अथाह भी है। लेकिन इस प्रेम की प्रतीति आसान नहीं। जायसी सम्पूर्ण 'पद्मावत' के कथानक को रक्त की लेई और गाढ़ी–प्रीति के नयन जल से भिगोकर सराबोर करते हैं–

मुहमद कबि यह जोरि सुनावा। सुना सो पीर प्रेम कर पावा।

जोरी लाइ रकत कै लेई। गाढ़ी प्रीति नयनन्ह जल भेई॥

जायसी के पद्मावत में व्यक्त प्रेम के स्वरूप को लेकर यह प्रश्न भी उठता है कि वह लौकिक है या अलौकिक। जायसी में सूफी मत को प्रतिष्ठित करने वाले चिंतकों के अनुसार यह प्रेम अलौकिक और आध्यात्मिक है। रामचन्द्र शुक्ल का मानना है कि मसनवियों का प्रेम एकांतिक, लोकबाह्य और आदर्शात्मक होता है। लेकिन वे जायसी के प्रेम में लोकपक्ष के सुंदर चित्रों की चर्चा भी करते हैं।[13] जबकि विजयदेव नारायण साही जायसी को अलौकिक प्रेम की तलाश करने वाले सूफी के रूप में नहीं अपितु एक विशुद्ध कवि के रूप में चिन्हित करते हैं जो प्रेम के मूल्यों को अलौकिक बना देता है। साही ने स्वयं माना है कि जायसी आध्यात्मवादियों के बीच भौतिकवादी हैं और भौतिकवादियों के बीच आध्यात्मवादी। मैनेजर पाण्डेय का मत यहाँ उल्लेखनीय है कि जो लोग जायसी को शुद्ध सूफी संत सिद्ध करना चाहते हैं वे 'पद्मावत' के लौकिक और मानवीय पक्षों की उपेक्षा करके केवल अध्यात्म और अलौकिक की खोज करना चाहते हैं और जो उन्हें शुद्ध कवि साबित करते हैं वे यह भूल जाते हैं कि 'अखरावट' और 'आख़िरी कलाम' भी जायसी की ही रचनाएँ हैं।[14] जायसी ने पद्मावत की रचना करते हुए स्वयं को किसी सूफी, भक्त या इतिहासकार के रूप में नहीं अपितु एक कवि के रूप में पहचाना है और अपने पाठकों से इसी रूप में स्वयं को याद किए जाने की कामना भी की है–

मुहमद यहि कवि जोरि सुनावा । सुना जो पेम पीर गा पावा ॥

जोरी लाइ रकत कै लेई । गाढ़ी प्रीति नैन जल भेई ॥[15]

जायसी की कविता का विषय ईश्वर नहीं अपितु मनुष्य है। उन्होंने इश्क मजाजी और इश्क हकीकी के माध्यम से भारतीय समाज, संस्कृति में मानवतावादी रंग प्रगाढ़ किया। बिखराव, बैर एवं विद्वेष से तबाह होते मध्यकालीन समाज को प्रेम का संदेश दिया। हिंदूओं और मुसलमानों के दिलों को जोड़ने का प्रयास किया। भारतीयता को खुले मन से अपनाया इसलिए वह खुलकर भारतीय हृदयों की मुक्ति के द्वार भी खोल सके।[16] माताप्रसाद गुप्त ने पद्मावत की सोलह पाण्डुलिपियों का तुलनात्मक अध्ययन करते हुए यह निष्कर्ष निकाला है कि जायसी ने पद्मावत की रचना किसी मत या पंथ के प्रचार के लिए नहीं की, बल्कि वे मानव प्रेम के उत्सव के रूप में इसकी रचना कर रहे थे। जायसी मानव प्रेम के विभिन्न भावों इच्छा, भटकाव, युग्मक, लोभ, भोग, ईर्ष्या, अलगाव, पीड़ा इत्यादि समस्त भावों को पूरे विस्तार के साथ चित्रित करते हैं। अगर वे किसी चीज का प्रचार करना भी चाहते हैं तो वह है मानवीय प्रेम, विशेषकर वैवाहिक प्रेम जिसे वे औदात्य के स्तर तक ले जाते हैं। यह मानुष प्रेम ही नश्वर मानव को अमर और दिव्य बनाता है।[17]

जायसी की सामंतवाद विरोधी चेतना का सबसे बाद प्रमाण यही है कि उन्होने सामंती व्यवस्था की सर्वोच्च सत्ता के एक प्रतिनिधि दिल्ली के सुल्तान अलाउद्दीन खिलजी को शैतान के रूप में देखा और चित्रित किया है।[18] पद्मावत की पूरी कथा में अलाउद्दीन खलनायक और रतनसेन नायक की तरह सामने आता है। इन दोनों चरित्रों को उनके धर्म से जोड़ कर देखें तो यह पूरी कथा एक संदर्भ में हिन्दू शौर्य और इस्लाम के आतंक और नृशंशता की कथा भी बन जाती है। जायसी स्वयं इस्लाम से जुड़े थे, लेकिन उनके लिए धर्म बाद में था, मनुष्यता सबसे पहले थी। रामस्वरूप चतुर्वेदी लिखते हैं – "मुसलमान होकर हिन्दू शौर्य की गाथा दिल्ली के सुल्तान के विरुद्ध एक नाजुक प्रसंग है। पर जायसी पद्मावत के चित्रण में एकदम खरे उतरते हैं। यहाँ दोनों पक्षों का पूरे आदर और आत्मीयता से उल्लेख हुआ है – हिन्दू तुरक, दुवौ रन गाजे। और अगर आत्मीयता कहीं कुछ अधिक है तो चितौड़ के साथ है न कि दिल्ली के।"[19]

जायसी का रचनात्मक वैशिष्ट्य है कि वे मिथकीय कल्पना पर केन्द्रित पद्मावत के पूर्वार्द्ध को पूरी सफलता के साथ ऐतिहासिक जीवन जगत के अनुभवों और प्रवृतियों पर आधारित पात्रों और जीवन (उतरार्द्ध) से इस तरह सफलतापूर्वक जोड़ देते हैं कि दोनों हिस्से एक–दूसरे के पूरक बन जाते हैं। कथा के पहले हिस्से में व्यक्ति–मनुष्य का आंतरिक जीवन है, उसकी इच्छाएँ–आकांक्षाएँ, आशा–स्वप्न–कामनाएँ हैं जो प्रेम–उत्सर्ग–सेवा–त्याग जैसे मूल्यों से आंदोलित है। दूसरे हिस्से में यथार्थ युग–जीवन है, जिसमें सत्ता का आतंक, प्रतिद्वंदिता, अन्याय, अत्याचार, हिंसा, घृणा, कपट–कुचाल समेत मानव तृष्णा की प्रधानता है।[20] पद्मावत का पूर्वार्द्ध पूरी तरह काल्पनिक है और उतरार्द्ध जायसी का समकालीन समय है और जो विद्रूपित है, नश्वर है। जायसी पद्मावत के माध्यम से यह संदेश देते हैं कि बड़ी ताक़तें, सत्ताएँ और साम्राज्य अपने अहम, अपनी तृष्णाओं की पूर्ति के लिए संघर्ष करते रहे हैं, तमाम आडंबर और प्रदर्शन करते रहे हैं, लेकिन यह वैभव तात्कालिक है जो कि मिट जाता है, राख हो जाता है। उसके पीछे व्यक्ति के कर्म रह जाते हैं, जैसे कि फूल के मुरझाने पर भी सुगंध रह जाती है, यश रह जाता है, सबसे ऊपर मानव प्रेम रह जाता है।

जायसी अन्य भक्त कवियों की तरह पतनोन्मुख सामंती समाज के विरोध या संघर्ष के बीच मूल्यों की तलाश नहीं करते अपितु पतनशील समाज के बीच मानवता की करुण धारा को निकालते हैं। जायसी अपने समय और समाज से गहरे स्तर पर जुड़े हैं, इसलिए वे अपने युगीन यथार्थ को उसकी पूरी नृशंसता के साथ सामने लाते हैं। आडंबर, विलासिता, युद्ध, धोखा, धर्म के नाम पर ध्रुवीकरण, ताकत का बेशर्म प्रदर्शन, प्रतिद्वंदी राजाओं की रानियों, बेटियों–बहनों को अपने भोग–विलास के लिए हरम में शामिल कर लेना– जैसी गतिविधियां मध्ययुग की सामान्य प्रचलित विशेषताएँ रही हैं। सैनिक गतिविधियों के समय संभ्रांत परिवारों की स्त्रियाँ सबसे अधिक संकट में होती थीं, सामान्य वर्ग की तो बात ही क्या! युद्ध के पश्चात विजेता पक्ष इन्हें अपनी वस्तु मान लेता था और इन पर कब्जा करने और इन्हें हरम में शामिल कर लेने के कारण वाद विवाद लंबे समय तक चलते रहते थे।[21] जायसी इन सभी तीक्ष्ण अनुभवों के जरिए पूरे मध्यकालीन परिवेश का अवलोकन करते हुए उस निर्मल भाव की तलाश करते हैं जो समाज के भेद को दूर कर सके। इसके लिए वे उच्च नैतिक मानदंडों साथ अपनी काव्य दृष्टि को जोड़ते हैं।

पद्मावत में दिल्ली के सुल्तान अलाउद्दीन और चित्तौड़ के शासक रत्नसेन के बीच संघर्ष में जायसी तटस्थ नहीं रहते बल्कि खुलकर रत्नसेन के साथ खड़े हो जाते हैं। इसके लिए वे रत्नसेन के पक्ष को पूरी नैतिकता के साथ निर्मित करते हैं। रत्नसेन और पद्मावती के प्रति उनके मानस में गहरी सहानुभूति है। कवि की दृष्टि से रत्नसेन और अलाउद्दीन के बीच संघर्ष दो जतियों का टक्कर न होकर दो विपरीत आदर्शों का भी टकराव है, जिसमें जायसी रत्नसेन के पक्ष को महिमामंडित करते है।[22] अलाउद्दीन के धोखेबाज होने और उस पर भरोसा न करने की सलाह पर रत्नसेन गोरा–बादल समझाते हुए उच्च नैतिक आदर्शों की दुहाई देते हुए कहता है कि हमें शत्रु से भी शिष्टाचार और प्रेम से पेश आना चाहिए, शत्रुता का भाव रखने से शत्रुता ही बढ़ती है। छल करने वाले को छल ही मिलता है और उसकी कभी जीत नहीं होती:

विख दीन्हें बिखधर होई खाई । लोन देखि होई लोन बिलाई ॥

मारें खरग खरग कर लेई । मारें लोन नाई सिर देई ॥

कौरव बिख जौं पंडवन्ह दीन्हा । अंतहुं दाँव पंडवन्ह लीन्हा ॥

जो छर करै ओहि छर बाजा । जैसें सिंध मंजूसा साजा ॥[23]

दो संस्कृतियों के संघर्ष के युग में जायसी न सिर्फ वर्णन में संतुलन कायम करते हैं, सांप्रदायिक विद्वेष को दूर रखते हैं अपितु एक साझी संस्कृति निर्मित करने का प्रयास करते हैं जो उच्च नैतिक और मनवातावादी आदर्शों पर आधारित है। जायसी की यह स्थापना महत्वपूर्ण है कि बड़ी–बड़ी शक्तियाँ, साम्राज्य, उनके वैभव, विलासिता और ऐश्वर्य – यह सबकुछ नश्वर है, क्षणभंगुर है, मिटने को अभिशप्त है। मानव प्रेम ही असली बैकुंठ है, मनुष्य की कीर्ति ही स्थायी है, जिसे मोल नहीं लिया जा सकता, मिटाया नहीं जा सकता:

केइं न जगत जस बेंचा केइं न लीन्ह जस मोल ।

जो यह पढ़ै कहानी हम सँवरै दुइ बोल ॥

जायसी के काव्य में मानवीय अनुभव और मानवीय मूल्यों की व्यंजना सर्वोपरी है। जायसी का प्रस्थान–बिंदु न ईश्वर है, न कोई अध्यात्म है। उनकी चिंता का मुख्य ध्येय मनुष्य है।[24] अपने युग की समस्त सामाजिक मान्यताओं, धार्मिक परंपराओं, और विभिन्न साधना मार्गों के रूढ़ संदर्भों से मुक्त होकर जायसी जीवन की विविधता और विस्तार को वर्णित करते हैं। उनकी दृष्टि में किसी भी साधना और सिद्धान्त से परे आचरण और व्यवहार का विशेष महत्व है। उनके यहाँ अगर जीवन के अपूर्व आनंद के चित्र हैं तो दुख और पीड़ा का अनंत भी। अगर संयोग, आनंद और ऐश्वर्य है तो वियोग की दारुण दशा और व्यथा के अपूर्व चित्र भी मौजूद हैं। इनकी रचना में ज़्यादातर राजपरिवारों, महलों और विराट ऐश्वर्य के साधन मौजूद हैं तो भावों के स्तर पर हर्ष, उल्लास, वियोग, चिंता, शोक, विषाद की स्थितियों का इस तरह चित्रण हुआ है कि यह सब जन–सामान्य के अनुभवों के स्तर पर उतर आता है, जन साधारण के अनुभवों से जुड़ जाता है। जायसी भक्तिकाल के एकमात्र कवि हैं जिनके सामने हिंदू मुसलमान अलग–अलग नहीं हैं। वे मिलकर सामान्य पाठक या श्रोता हो गए हैं, इसलिए जायसी को न चौकन्नी तटस्थता की जरूरत पड़ती है ना आलोचना और प्रतिरोध के तराजू के दोनों पक्षों को बराबर रखने की चिंता व्याप्ति है।[25] जायसी के प्रेम का महात्म्य भले अलौकिक जान पड़े लेकिन यह प्रेम विशुद्ध लौकिक उपकरणों से निर्मित और चालित भी प्रतीत होता है।

संदर्भ

1. जायसी शाहे-वक्त की प्रशंसा करते हुए शेरशाह का उल्लेख करते हैं-
   सेरसाहि दिल्ली सुल्तानू । चारीउ खंड तपई जस भानू ॥
   ओही छाज छात औ पाटू । सब राजा भुईं धरहिं लिलाटू ॥
   पृष्ठ-3, स्तुतिखंड (13), पद्मावत, संपादक – वासुदेवशरण अग्रवाल, साहित्य सदन, चिरगांव, दूसरा संस्करण, सं. 2018
2. पृष्ठ 84, हिंदुई साहित्य का इतिहास : गार्सा-द-तासी (अनुवाद- लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय), हिंदुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद, संस्करण 1953
3. पृष्ठ 51, हिंदी साहित्य का प्रथम इतिहास, सर जार्ज अब्राहम ग्रियर्सन (अनुवाद – किशोरीलाल गुप्त), हिंदी प्रचारक संस्थान वाराणसी, संस्करण 1957
4. पृष्ठ 246, मिश्रबंधु विनोद, मिश्रबंधु, गंगा पुस्तकमाला, लखनऊ, संस्करण 1937
5. पृष्ठ 106, जायसी, विजयदेव नारायण साही, हिंदुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद, 1993
6. पृष्ठ 63, हिन्दी साहित्य की भूमिका, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 1991
7. पृष्ठ 56, हिन्दी साहित्य का इतिहास, रामचन्द्र शुक्ल, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, उन्तीसवाँ संस्करण, सं. 2051
8. पृष्ठ 332, (रामविलास शर्मा) मध्यकालीन साहित्य विमर्श, संपादक- सुधा सिंह, आनंद प्रकाशन, कोलकाता, प्रथम संस्करण, 2004
9. दूसरे संस्करण की भूमिका, भक्ति आंदोलन और सूरदास का काव्य- मैनेजर पाण्डेय, वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नयी दिल्ली, चतुर्थ संस्करण 2003
10. पृष्ठ 242, जायसी और उनका पद्मावत, डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी, हिन्दी साहित्य संसार, नयी सड़क, दिल्ली, संस्करण 1959
11. पृष्ठ 815, जायसी और उनका पद्मावत, डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी, हिन्दी साहित्य संसार, नयी सड़क, दिल्ली, संस्करण 1959
12. पृष्ठ 39, भक्ति आंदोलन और सूरदास का काव्य, मैनेजर पाण्डेय, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, चतुर्थ संस्करण 2003
13. पृष्ठ 15, त्रिवेणी, रामचन्द्र शुक्ल, संपादक- कृष्णानंद, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, संस्करण संवत 2050
14. पृष्ठ 38, भक्ति आंदोलन और सूरदास का काव्य, मैनेजर पाण्डेय, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, चतुर्थ संस्करण 2003
15. पृष्ठ 876, उपसंहार खंड (652), पद्मावत, संपादक – वासुदेवशरण अग्रवाल, साहित्य सदन, चिरगांव, दूसरा संस्करण, सं. 2018
16. 2078-2080, समाज विज्ञान विश्वकोश खंड 6, संपादक- अभय कुमार दुबे, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, दूसरा संस्करण 2016
17. www.indiatoday.in/magazine/cover-story/story/20171204-padmavati-karni-sena-malik-muhammad-jayasi-sanjay-bhansali-1092364-2017-11-24 पुरुषोत्तम अग्रवाल
18. प्रथम संस्करण की भूमिका, भक्ति आंदोलन और सूरदास का काव्य, मैनेजर पाण्डेय, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, चतुर्थ संस्करण 2003
19. पृष्ठ 49, हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास- रामस्वरूप चतुर्वेदी, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण 1993
20. पृष्ठ 23, जायसी: एक नयी दृष्टि, रघुवंश, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण, 1993
21. पृष्ठ 51, The many lives of a Rajput Queen-Ramya Sreeniwasan, University of Washington Press, Seattle, USA 2007
22. पृष्ठ 54, पद्मावत, संपादक – वासुदेवशरण अग्रवाल, साहित्य सदन, चिरगांव, दूसरा संस्करण, सं. 2018
23. पृष्ठ 740, 559/4-7, पद्मावत, संपादक – वासुदेवशरण अग्रवाल, साहित्य सदन, चिरगांव, दूसरा संस्करण, सं. 2018
24. पृष्ठ 62, जायसी, विजयदेव नारायण साही हिंदुस्तान एकेडमी, इलाहाबाद, द्वितीय संस्करण 1993
25. पृष्ठ 64, जायसी, विजयदेव नारायण साही हिंदुस्तान एकेडमी, इलाहाबाद, द्वितीय संस्करण 1993